9

वचन देहधारी हुआ

(यूहन्ना 1:1-18)

नाइसिया में 325 ईस्वी में 318 चर्च लीडरों का एक समूह आधुनिक तुर्की के उत्तर-पश्चिम में यीशु के वास्तविक स्वभाव और परमेश्वर पिता के साथ उसके सम्बन्ध पर विवाद को सुलझाने के लिए एकत्र हुआ। वे आरियुस नामक एक व्यक्ति की शिक्षाओं के जवाब में इकट्ठा हुए थे, जिसका कहना था कि यीशु को परमेश्वर द्वारा सृजा गया था यानी यह कि उसका आरम्भ था और वह परिवर्तन के अधीन था।

नाइसिया की सभा के उत्तर को नाइसीन क्रीड या नाइसिया का धर्मसार कहा जाता है:

> हम विश्वास करते हैं एक ही परमेश्वर को, जो सर्वशक्तिमान पिता, सब दिखाई देने वाली और अदृश्य वस्तुओं का सृष्टिकर्त्ता है;
>
> और एकमात्र प्रभु यीशु मसीह को, जो परमेश्वर का पुत्र, पिता का इकलौता है, जो पिता से जो परमेश्वर का परमेश्वर, प्रकाश का प्रकाश, सच्चे परमेश्वर का सच्चा परमेश्वर, एकमात्र जिसे सृजा नहीं गया, पिता के समान, जिससे सब वस्तुएं चाहे वह आकाश की हों पृथ्वी की हों बनाई गई थीं; जो हम मनुष्यों के लिए और हमारे उद्धार के लिए नीचे आया और देह धार कर मनुष्य बना। उसने दुख उठाया और तीसरे दिन जी उठा और स्वर्ग में उठा लिया गया और वह मरे हुओं और जीवितों दोनों का न्याय करने के लिए आएगा।
>
> और [हम विश्वास रखते हैं] पवित्र आत्मा में।
>
> पर जो लोग कहते हैं कि किसी समय वह नहीं था, या अपनी पीढ़ी से पूर्व वह नहीं था या वह शून्य में से बना, या जो दावा करते हैं कि वह अर्थात परमेश्वर का पुत्र अलग *hypostasis* [तत्व] या *ousia* [जीन] से है, या यह कि वह एक सृष्टि या परिवर्तनीय, या परिवर्तनशील है, कैथोलिक और प्रेरिताई की कलीसिया उन्हें अभिशाप देती है।[1]

मनुष्य के बनाए इस धर्मसार के अनुसार यीशु ''पिता के सार से,'' ''सच्चे परमेश्वर से सच्चा परमेश्वर,'' ''इकलौता है, सृजित नहीं।'' सभा में भाग लेने उन सब लोगों पर जो विरोधी विचार रखते थे आधिकारिक ''अभिशाप'' (श्राप) देते हुए अपनी स्थिति को ठोस बनाया। नाइसिया के धर्मसार बनने से यीशु की प्रकृति का प्रश्न पूरी तरह से हल नहीं हुआ क्योंकि बहस जारी रही, जैसा आज के दिन तक है।

नीकया के धर्मसार के साथ कुछ दिक्कत यह है कि इसके लेखकों ने अ-बाइबली शब्द *hypostasis* (जिसका अर्थ ''सार'' या ''वास्तविकता'' है), उसके विवरण के लिए जो वे यीशु के सम्बन्ध में मानते थे शरण ली।[2] परन्तु यीशु के स्वभाव का सबसे बढ़िया स्पष्टीकरण यूहन्ना 1:1-18 के अलावा मनुष्य के बनाए किसी धर्मसार में नहीं मिलता। यह सीधे तौर पर यीशु की

प्रकृति के मुद्दे की बात करता है और विशेष रूप से सदियों पुराने सवालों का जवाब देता है कि ''क्या यीशु परमेश्वर था, या वह केवल परमेश्वर के जैसा था?''; ''क्या वह 'ईश्वरीय मनुष्य' था अर्थात कुछ दैवीय गुणों वाला मनुष्य, अर्ध परमेश्वर और अर्ध मनुष्य था?'' यूहन्ना 1:1-18 हमारे लिए ये सब उत्तर देता है, सो यह देखने के लिए कि वचन यीशु की प्रकृति के बारे में हमें क्या बताता है इसे ध्यान से देखते हैं।

यीशु पूर्णतया परमेश्वर है

यूहन्ना की पुस्तक में यीशु की कहानी सुसमाचार के अन्य तीनों वृत्तांतों से बहुत पीछे से आरम्भ होती है। मत्ती और लूका दोनों यीशु के गर्भ में आने की कहानी बताते हैं, जबकि मरकुस उसके साथ एक व्यस्क के रूप में आरम्भ करता है। इनके विपरीत यूहन्ना बहुत पीछे अनन्तकाल में चला जाता है: ''आदि में वचन था।'' यही कारण है कि हम मसीह के ''पूर्व-अस्तित्व'' की बात कर सकते हैं क्योंकि ''आदि में'' वचन पहले से था। ''आदि में'' शब्द स्वाभाविक रूप में हमारे ध्यान उत्पत्ति 1 में पीछे ले जाते हैं। वास्तव में इस वाक्यांश का अर्थ वही है जो यूहन्ना 1 में है और जैसे कि इसका अर्थ उत्पत्ति 1 में है: यीशु का अस्तित्व ''आदि में'' नहीं बल्कि किसी के भी अस्तित्व में आने से पूर्व, वचन था।

यूहन्ना ने यीशु को ''वचन'' क्यों कहा? उसका उत्तर देने से पहले हमें यह ध्यान देना चाहिए कि आयत 14 दिखाती है कि वह यीशु की बात कर रहा था: ''और वचन देहधारी हुआ और हमारे बीच में डेरा किया।'' फिर वह यीशु की कहानी बताने के लिए आगे बढ़ा परन्तु उसने उसे ''वचन'' क्यों कहा? यूहन्ना यीशु के लिए यह अनोखा नाम इस्तेमाल करने वाला नये नियम का अकेला लेखक है (यह मानते हुए कि यूहन्ना ने प्रकाशितवाक्य की पुस्तक भी लिखी; देखें प्रकाशितवाक्य 19:13)। यह कहने का उसका क्या अर्थ है?

पहले तो ''वचन'' (लोगोस) यह संकेत देता है कि यीशु परमेश्वर के मन की अभिव्यक्ति है। किसी ''वचन'' का अर्थ किसी के मन के विचार दूसरे तक पहुंचाना होता है, चाहे हम बोले या लिखे हुए शब्द की बात करें। यूहन्ना कह रहा था कि यीशु परमेश्वर के मन अर्थात उसकी इच्छा को हमें बताने का माध्यम है। इब्रानियों 1:1, 2 यही बात कहता है: ''बहुत पहले, कई बार, और कई प्रकार से परमेश्वर ने हमारे पुरखाओं के साथ नबियों के द्वारा बात की, परन्तु इन अन्तिम दिनों में उसने हमारे साथ अपने पुत्र के द्वारा बातें की हैं ...'' (ESV)।

दूसरा, यीशु को ''वचन'' कहना इस बात का संकेत है कि वह परमेश्वर की सामर्थ की अभिव्यक्ति है। यशायाह 55:8-11 के अनुसार, परमेश्वर के वचन में वह खूबी है जो हमारे वचनों या बातों में नहीं यानी यह अपना असर करता ही है और परमेश्वर के उद्देश्य को पूरा करता है। जो कुछ परमेश्वर चाहता है, वह हो जाता है। यही कारण है कि उत्पत्ति 1 बार-बार सृष्टि की प्रक्रिया का वर्णन ''फिर परमेश्वर ने कहा'' के साथ करता है। जो कुछ परमेश्वर ने कहा वैसे ही हो गया। ''आकाश मण्डल यहोवा के वचन से'' बने (भजन संहिता 33:6क)। यीशु में होकर, परमेश्वर ने अपनी सामर्थ यानी जीवन और प्रकाश को लाने वाली अपनी सामर्थ (आयतें 4, 5) और पापियों को अपनी संतान बनाने वाली सामर्थ को श्रेष्ठ रूप में दिखाया।

यह कहकर कि ''... वचन परमेश्वर के साथ था'' यूहन्ना ने संकेत दिया कि पुत्र यीशु और

पिता परमेश्वर मिलते-जुलते जीव नहीं बल्कि अलग-अलग व्यक्तित्व हैं। यह एक महत्वपूर्ण बात है यानी हमें यह नहीं सोचना चाहिए कि यीशु में परमेश्वर ने केवल कुछ समय के लिए अलग रूप धारा। यह विचार कि परमेश्वर केवल एक व्यक्ति में है जिसने कई बार पुत्र और पवित्र आत्मा का रूप लिया इसे ''निश्चयमात्रिक तर्कवाद'' कहा जाता है। ''निश्चयमात्रिक तर्कवादी'' जैसा कि इसके मानने वालों को कहा जाता है, बहस करते हैं कि यह व्याख्या बाइबल की बातों के साथ न्याय करती है कि परमेश्वर केवल एक है और ''एक में तीन व्यक्तियों'' की बात की उलझन से बचाती है। परन्तु निश्चयमात्रिक तर्कवाद बाइबल की कुछ महत्वपूर्ण बातों को नज़रअन्दाज़ कर देता है। उदाहरण के लिए हमें बताया गया है कि परमेश्वर ने पुत्र को संसार में ''भेजा'' और बाद में यीशु ने अपने चेलों के साथ होने के लिए आत्मा को ''भेजा'' कई (अन्य उदाहरणों में, देखें यूहन्ना 16:5-11)। ये अभिव्यक्तियां इस तथ्य को नज़रअन्दाज़ करना असम्भव बना देती हैं कि पिता, पुत्र और आत्मा तीन व्यक्ति हैं पर फिर भी एक ही परमेश्वर है।

आगे हम पढ़ते हैं, ''... और वचन परमेश्वर था।'' यीशु परमेश्वर है, बिल्कुल वैसे ही जैसे पिता परमेश्वर है। दोनों आपस में इस प्रकार से गुथे हुए हैं कि पुराना और नया दोनों नियम घोषणा करते हैं कि परमेश्वर केवल एक है। इस अवधारणा को समझना कठिन है और झगड़े का कारण भी यही बात है। परन्तु यही विचार आगे यूहन्ना में दर्शाया गया है, जब यीशु ने थोमा को दर्शन दिया, जिसने कहा था कि जब तक वह अपनी आंखों से देख न ले तब तक जी उठने पर विश्वास नहीं करेगा। जब यीशु ने उसे अपने कीलों के निशान में उंगली और भाले से हुए घाव में हाथ डालने को कहा, तो थोमा पुकार उठा, ''हे मेरे प्रभु, हे मेरे परमेश्वर!'' (यूहन्ना 20:28)।

यह कि यीशु परमेश्वर है संसार की सृष्टि में वचन की भूमिका से जुड़े वाक्यों से यूहन्ना 1 अध्याय में और बताया गया है: ''सब कुछ उसी के द्वारा उत्पन्न हुआ और जो कुछ उत्पन्न हुआ है, उस में से कोई भी वस्तु उसके बिना उत्पन्न न हुई'' (आयत 3); ''वह जगत में था, और जगत उसके द्वारा उत्पन्न हुआ, और जगत ने उसे नहीं पहिचाना'' (आयत 10)।

अनन्तकाल से अनन्तकाल तक केवल परमेश्वर का अस्तित्व है। केवल परमेश्वर ही सृष्टि को रच सकता था। केवल परमेश्वर ही प्रकाश और जीवन देता है। यूहन्ना रचित सुसमाचार कहता है कि यीशु के लिए जो वचन है ये सब बातें सत्य हैं।

यीशु पूर्णतया मनुष्य था

यूहन्ना 1:14क हर सम्भव दो टूक ब्यान करता है कि यीशु ने इस पृथ्वी पर आने के समय मानवीय रूप धारण किया था: ''और वचन देहधारी हुआ, और हमारे बीच में डेरा किया।'' यूहन्ना कह सकता था, ''वचन मनुष्य बना'' या ''वचन आदमी बना,'' पर उसने यीशु के पृथ्वी की उपस्थिति की शारीरिक प्रकृति पर ज़ोर देने को चुना। कइयों ने सुझाव दिया है कि ऐसा करके यूहन्ना अपने समय के उन लोगों के मुंह पर तमाचा मार रहा था, जो दावा करते थे कि यीशु ने वास्तव में मानवीय रूप नहीं लिया, बल्कि ऐसा केवल प्रतीत होता है। उन्हें यूनानी शब्द ''*dokeo*'' (''प्रतीत होना, लगना'') से लिए शब्द से ''प्रतीयमानवादी या निराकारवादी'' कहा जाता था। इन लोगों काह्य यह भी मानना था कि तत्व बुरा है और आत्मा अच्छी; सो यूहन्ना ने जानबूझकर यह प्वायंट उठाया होगा: ''वचन देहधारी हुआ।'' यूहन्ना का ध्यान इन

निराकारवादियों पर था या नहीं, पर उसने अपनी बात बहुत साफ़ ढंग से बताई।

यह कथन कि वचन देहधारी ''हुआ'' दिखाता है कि यीशु के वास्तविक स्वभाव में मूल में मनुष्यता होना नहीं थी, पर पृथ्वी पर रहते समय वह मनुष्य था। ''हमारे बीच में डेरा किया'' शब्दों के यूहन्ना के इस्तेमाल से इस पर और ज़ोर दिया गया है। ''डेरा किया'' यूनानी भाषा के शब्द से लिया गया है जिसका अर्थ ''डेरा लगाया'' या ''अपना तम्बू लगाया'' है। तम्बू आम तौर पर पक्का मकान नहीं होता, बल्कि आम तौर पर यह वहनीय और अस्थाई होता है। यीशु का शारीरिक स्वभाव ऐसा ही था। वह हमारे बीच में केवल कुछ समय के लिए ''अपना तम्बू गाड़ रहा'' था। हम इसे ''देह'' के लिए लातीनी शब्द से ''देहधारण करना'' कहते हैं। मूल में यह यीशु का ''शरीर में आना'' था। इसका अर्थ यह है कि यीशु मानवीय अस्तित्व की विशेषता की हर बात को भोगने में पूरी तरह से सक्षम था। उसे हमारी ही तरह भूख लगती, थकावट होती और नींद आती थी। मरकुस 14:33 तो यह भी संकेत देता है कि क्रूस पर जाने की बात सोचकर (चाहे यह कई अंग्रेज़ी अनुवादों में अस्पष्ट है) वह ''बहुत ही अधीर और व्याकुल'' हुआ। जो भी बात हमारी शारीरिक देह पर हो सकती है वह उस पर हुई।

परमेश्वर को मनुष्य बनने की क्या आवश्यकता थी? यूहन्ना 1:18 इसका साफ़ उत्तर देता है: ''परमेश्वर को किसी ने कभी नहीं देखा, इकलौता पुत्र जो पिता की गोद में है, उसी ने उसे प्रगट किया।'' ''उसे प्रगट किया'' यूनानी भाषा की क्रिया ''*exegeomai*'' से लिया गया है जिससे ''व्याख्या करना'' के लिए अंग्रेज़ी शब्द ''*exegesis*'' निकला है। ''एक्सेजेसिस'' वह शब्द है जिसे बाइबल के वचन को विस्तार देने और इसे दूसरों को समझाने के लिए व्याख्या करने वाला करता है। इसका अर्थ ''प्रगट करना, समझाना'' है। हमारे सब के लिए यीशु ने आकर बिल्कुल यही किया: यानी परमेश्वर की कुछ सच्चाइयों को हमें सिखाने के लिए वचन देहधारी हुआ जिन्हें हम किसी और ढंग से नहीं सीख सकते। सीमित मनुष्य होने के कारण, हम परमेश्वर की असीमित महिमा, सामर्थ और प्रेम को उसे देह में ''देखे'' बिना कैसे समझ सकते थे? 1 यूहन्ना 4:9, 10 कहता है, ''जो प्रेम परमेश्वर हम से रखता है, वह इससे प्रगट हुआ, कि परमेश्वर ने अपने एकलौते पुत्र को जगत में भेजा है, कि हम उसके द्वारा जीवन पाएं। प्रेम इस में नहीं, कि हम ने परमेश्वर से प्रेम किया; पर इसमें है, कि उसने हमसे प्रेम किया; और हमारे पापों के प्रायश्चित्त के लिए अपने पुत्र को भेजा।'' बेशक परमेश्वर हमेशा प्रेम करने वाला परमेश्वर रहा है, पर यीशु के आने और क्रूस पर मरने से पहले उसके प्रेम की गहराई की समझ उसके लोगों को नहीं थी।

जब फिलिप्पुस ने बाद में यीशु से विनती की, ''हे प्रभु, पिता को हमें दिखा दे, यही हमारे लिए बहुत है,'' तो यीशु ने उत्तर दिया, ''हे फिलिप्पुस, मैं इतने दिन से तुम्हारे साथ हूं, और क्या तू मुझे नहीं जानता? जिसने मुझे देखा है उसने पिता को देखा है ...'' (यूहन्ना 14:8, 9)। यीशु को ''देखना'' चाहे व्यक्तिगत रूप में हो जैसे फिलिप्पुस ने देखा, या पवित्र शास्त्र के वचनों के द्वारा, जैसे हम देखते हैं, परमेश्वर की किसी बात को देखना है जिसे किसी और ढंग से नहीं जाना जा सकता।

यूहन्ना 1:17 कहता है कि ''व्यवस्था तो मूसा के द्वारा दी गई; परन्तु अनुग्रह, और सच्चाई यीशु के द्वारा पहुंची।'' हमें इसका अर्थ यह नहीं लेना चाहिए कि यीशु के आने से पहले अनुग्रह

और सच्चाई नहीं थे या इनमें से किसी का ज्ञान नहीं था। यह पुराने नियम को बुरी तरह से तोड़ना मरोड़ना और नासमझी होगी। स्वाभाविक है कि यीशु के आने से पहले अनुग्रह और सच्चाई थी। इस्राएल के साथ धीरज से परमेश्वर के व्यवहारों की एक झलक ही उसके अनुग्रहकारी स्वभाव को तय करने के लिए काफ़ी है। उसकी सच्चाई हमेशा उसके वचन में बताई जाती रही है, जैसे ''दस आज्ञाओं'' में और नबियों के द्वारा। यूहन्ना के कहने का अर्थ यह नहीं था कि यीशु के आने से पहले अनुग्रह और सच्चाई थे ही नहीं (या उन्हें बताया नहीं गया), बल्कि यह कि उसके आने से पहले उनका पूरी भरपूरी से ज्ञान नहीं था। भजन संहिता 103:8 बताता है कि ''यहोवा दयालु और अनुग्रहकारी है,'' परन्तु यह अनुग्रह कितना अनुग्रहकारी है इसका हमें तब तक पता नहीं चला जब तक यीशु के रूप और जीवन में यह देहधारी नहीं हुआ और क्रूस पर उसकी मृत्यु नहीं हुई।

यूहन्ना 1:1–18 यीशु के स्वभाव की दो साफ़ बातें कहता है, *वह पूर्णतया परमेश्वर है* और *वह पृथ्वी पर रहते समय पूर्णतया मनुष्य था*।

दो महत्वपूर्ण प्रश्न

यूहन्ना की बातों से यीशु की प्रकृति पर दो सवाल खड़े होते हैं जिनकी बात करना आवश्यक है। पहला, हम पूछते हैं, *''क्या यह शिक्षा [कि यीशु पूर्णतया परमेश्वर भी था और पूर्णतया मनुष्य भी] शेष पवित्र शास्त्र के साथ मेल खाती है?''* पौलुस ने इस प्रश्न का बेहतरीन उत्तर अपने तीन पत्रों में दिया है। फिलिप्पियों 2:5–8 में उसने लिखा:

> जैसा मसीह यीशु का स्वभाव था वैसा ही तुम्हारा भी स्वभाव हो। जिस ने *परमेश्वर के स्वरूप में* होकर भी परमेश्वर के तुल्य होने को अपने वश में रखने की वस्तु न समझा। वरन अपने आप को ऐसा शून्य कर दिया, और दास का स्वरूप धारण किया, और *मनुष्य की समानता में* हो गया। और *मनुष्य के रूप में प्रगट होकर* अपने आप को दीन किया, और यहां तक आज्ञाकारी रहा, कि मृत्यु हां, क्रूस की मृत्यु भी सह ली।

इटैलिक या तिरछे किए गए वाक्यांश दिखाते हैं कि पौलुस का विचार सीधे-सीधे यूहन्ना के विचार से मिलता था: यीशु ''परमेश्वर के स्वरूप में'' था, (वचन परमेश्वर है), पर उसने ''मनुष्य का रूप'' लिया (''वचन देहधारी हुआ'')।

इसी प्रकार कुलुस्सियों 1:15–19 में पौलुस ने कहा:

> वह तो अदृश्य परमेश्वर का प्रति रूप और सारी सृष्टि में पहिलौठा है। क्योंकि उसी में सारी वस्तुओं की सृष्टि हुई, स्वर्ग की हो अथवा पृथ्वी की, देखी या अनदेखी, क्या सिंहासन, क्या प्रभुताएं, क्या प्रधानताएं, क्या अधिकार, सारी वस्तुएं उसी के द्वारा और उसी के लिए सृजी गई हैं। और वही सब वस्तुओं में प्रथम है, और सब वस्तुएं उसी में स्थिर रहती हैं। और वही देह, अर्थात कलीसिया का सिर है; वही आदि है और मरे हुओं में से जी उठने वालों में पहिलौठा कि सब बातों में वही प्रधान ठहरे। क्योंकि पिता की प्रसन्नता इसी में है कि उस में सारी परिपूर्णता वास करे।

इसी प्रकार कुलुस्सियों 2:9 में और ज़ोर दिया गया है: ''क्योंकि उस में ईश्वरत्व की सारी परिपूर्णता सदेह वास करती है।'' अन्य शब्दों में जो बात परमेश्वर के लिए है वही यीशु के लिए भी है। फिर से परमेश्वर की ''सारी परिपूर्णता'' और पौलुस के हवालों और यीशु के यह कहने की ''वचन परमेश्वर था'' के बीच समानता स्पष्ट है। कइयों ने सुझाव दिया है कि यह वचन वही सिखाता है जो चौथी शताब्दी में अरियुस का मानना था कि यीशु वास्तव में परमेश्वर द्वारा सबसे पहला सृजित प्राणी था। ''सारी सृष्टि का पहलौठा।'' परन्तु इस संदर्भ में इस व्याख्या का कोई अर्थ नहीं है। यदि परमेश्वर की ''सारी परिपूर्णता'' यीशु में वास करती थी, तो वह सृजत जीव नहीं हो सकता था। ''पहलौठा'' क्रम के बजाय प्राथमिकता और विशेषाधिकार से सम्बन्ध रखता है। पुराने नियम में पहलौठे पुत्र को अपने पिता की विरासत का दो गुणा भाग दिया जाता था और उसे पिता की मृत्यु के समय परिवार का नेतृत्व सौंपा जाता था। विशेषाधिकार की स्थिति का यह विचार कि यीशु ''प्रथम जीव'' नहीं था निश्चित रूप से पौलुस के मन में था। वरना वह कुछ ऐसा लिखता जिसका कोई अर्थ न होता।

फिर तीतुस 2:11-13 आता है:

> क्योंकि परमेश्वर का वह अनुग्रह प्रगट है, जो सब मनुष्यों के उद्धार का कारण है। और हमें चिताता है, कि हम अभक्ति और सांसारिक अभिलाषाओं से मन फेरकर इस युग में संयम और धर्म और भक्ति से जीवन बिताएं। और उस धन्य आशा की अर्थात अपने महान परमेश्वर और उद्धारकर्ता यीशु मसीह की महिमा के प्रगट होने की बाट जोहते रहें।

यहां पौलुस ने यीशु को स्पष्ट रूप में ''परमेश्वर'' कहा (*Theos*, जैसे यूहन्ना 1:1 में)। जैसा कि RSV और NRSV में टिप्पणियों के द्वारा संकेत दिया गया है कि यह सच है कि इस अभिव्यक्ति का अनुवाद उचित रूप से यीशु को ''परमेश्वर'' कहने के बजाय, परमेश्वर और यीशु में अंतर करते हुए ''महान परमेश्वर और हमारे उद्धारकर्त्ता का'' हो सकता है। परन्तु यूनानी धर्मशास्त्र का सबसे स्वाभाविक पढ़ा जाना इस प्रकार नहीं है। बहुत कम अंग्रेज़ी अनुवादों में इस तरह किया गया है। ऐसी बहुत कम सम्भावना है कि पौलुस यीशु को ''परमेश्वर'' कहकर यूहन्ना का साथ दे रहा था।

परन्तु यूहन्ना और पौलुस यीशु के स्वभाव के इस विचार में अकेले नहीं थे। इब्रानियों 1:3 कहता है कि पुत्र ''उसकी महिमा का प्रकाश, और उसके तत्व की छाप है, और सब वस्तुओं को अपनी सामर्थ के वचन से सम्भालता है।'' ''उसके तत्व की छाप'' परमेश्वर के स्वभाव की हू-ब-हू नकल है। कुछ आयतों के बाद, इब्रानियों का लेखक पुत्र के लिए भजन संहिता 45:6, 7 और पुराने नियम के अन्य वचन लगाकर उसे ''परमेश्वर'' कहता है (1:8)। यह पत्री भी उसे ''प्रभु'' कहती है जो पुराने नियम में आम तौर पर परमेश्वर को दिया नाम है (देखें 7:14)। यह स्पष्ट है कि यीशु के परमेश्वर और मनुष्य होने के यूहन्ना की घोषणाएं पूरी तरह से नये नियम के शेष प्रकाशन से मेल खाती हैं।

यूहन्ना के दावों से उठा दूसरा सवाल है, *हम कैसे मान सकते हैं कि पिता और पुत्र एक ही परमेश्वर हैं?* तर्कसंगत रूप में दो जीव एक नहीं हो सकते तो परमेश्वर पिता और यीशु पुत्र दोनों परमेश्वर कैसे हो सकते हैं? यह स्थिति और भी जटिल हो जाती है जब इस समीकरण में

पवित्र आत्मा को मिलाते हैं, जिससे हमारे पास तीन व्यक्ति हैं पर परमेश्वर अभी भी एक ही है। यह जायज चिन्ता है और इससे दो महत्वपूर्ण प्रतिक्रियाएं दी जा सकती हैं।

1. पहली प्रतिक्रिया वह विश्वास करना है जिसकी हमें समझ नहीं है। हम सब हर समय इसे करते हैं। उदाहरण के लिए मुझे यह कभी समझ नहीं आया कि हवाई जहाज़ कैसे उड़ते हैं। मैंने उठाने और धकेलने की सब व्याख्याएं सुनी हैं पर अभी तक मुझे इसकी समझ नहीं आई। जब मैं 747 जैट के आकार और वज़न को देखता हूं और उस भार में यात्री, सामान और ईंधन को जोड़ लेता हूं तौ भी मेरे लिए यह सम्भव नहीं लगता। इसके बावजूद मैं जहाज़ में उड़ा हूं और मुझे यकीन है कि यह काम करता है। इसी प्रकार से हमें यूहन्ना 3:16 की बात पर विश्वास करना है: ''क्योंकि परमेश्वर ने जगत से ऐसा प्रेम रखा कि उस ने अपना एकलौता पुत्र दे दिया, ताकि जो कोई उस पर विश्वास करे, वह नाश न हो, परन्तु अनन्त जीवन पाए।'' मुझे इसकी भी समझ नहीं है। परमेश्वर पापी लोगों से इतना प्रेम कैसे कर सकता है कि वह अपना इकलौता पुत्र ही उनके लिए दे दे? सीमित मानवीय सोच के लिए इसका कोई अर्थ नहीं है, पर मसीही होने के नाते हम इस पर विश्वास करते हैं। तो फिर हमें परमेश्वर की प्रकृति पर किसी बात को जिसे हम समझते नहीं हैं स्वीकार करने में क्या दिक्कत?

2. दूसरी प्रतिक्रिया उसे स्वीकार करने की है जो हम परमेश्वर और उसके स्वभाव के बारे में नहीं समझ सकते। इससे हमें चकित नहीं होना चाहिए। यदि हम उसे पूरी तरह से समझ जाएं तो परमेश्वर कैसा हो? वास्तव में परमेश्वर की ऐसी बहुत बातें हैं जिनकी हमें समझ नहीं है। उसने शून्य से संसार की रचना कैसे की? यह कैसे हो सकता है कि उसके वचन में इतनी सामर्थ हो कि वह चीज़ों को ''बोल कर'' अस्तित्व में ला सके? पृथ्वी के करोड़ों लोगों के साथ, उसे कैसे मालूम कि हम में से हर किसी के जीवन में क्या होने वाला है? यीशु ने कहा कि परमेश्वर हमें इतनी अच्छी तरह से जानता है कि हमारे सिर के बाल भी गिने हुए हैं। शायद सबसे बड़ा रहस्य यही है: वह हमारी चिन्ता क्यों करता है? वह पापियों से भरे संसार के लिए जिनमें से अधिकतर को उसकी कोई परवाह भी नहीं है अपने पुत्र को मरने के लिए कैसे दे सकता है? आइए हम मान लें कि हमें परमेश्वर की बहुत सी बातों की समझ नहीं है।

सारांश

क्या यीशु परमेश्वर है? हां। क्या वह मनुष्य है? हां। क्या हम उसे समझते हैं? नहीं, परन्तु हम फिर भी विश्वास करते हैं। हमारी आत्माओं का आधार यही है! ''आदि में वचन था, और वचन परमेश्वर के साथ था और वचन परमेश्वर था'' (यूहन्ना 1:1); ''परन्तु जितनों ने उसे ग्रहण किया, उस ने उन्हें परमेश्वर के संतान होने का अधिकार दिया, अर्थात उन्हें जो उसके नाम पर विश्वास रखते हैं'' (यूहन्ना 1:12)।

टिप्पणियां

[1]जॉन एच. लेथ, *क्रीडज़ ऑफ़ द चर्चिज़* (अटलांटा: जॉन नॉक्स, 1973), 30-31. [2]बाइबल के विचारों को व्यक्त करने की कोशिश के लिए गैर बाइबली भाषा पर आश्रित होना धर्मसारों की शैली है (वरना वह धर्मसार केवल पवित्र शास्त्र को दोहराना ही लगेगा)। बिल्कुल यही कारण है कि वे पहले लिखे गए धर्मसारों को स्पष्ट करने या सुधारने के लिए बाद में लिखे गए धर्मसारों इतनी बहस और चर्चा का विषय हैं।

निराकारवादी और ज्ञानवादी

''निराकारवादी'' के नाम से प्रसिद्ध समूह आध्यात्मिक विश्वास का एक गुट था जिसे ''ज्ञानवाद'' (gnosticism) (यूनानी भाषा के शब्द ''*gnosis*'' से जिसका अर्थ ''ज्ञान'') के रूप में जाना जाता है। ज्ञानवाद मसीहियत के ऊपर यूनानी दर्शनशास्त्र के प्रभाव के कारण था, और दूसरी शताब्दी ईस्वी में यह मसीही विश्वास के लिए काफ़ी खतरनाक शत्रु बन गया।

ज्ञानवादी विश्वास का आधार दर्शनशास्त्रीय द्वैतवाद था, यह विश्वास कि तत्व बुरा है और आत्मा अच्छी है। ज्ञानवाद के बारे में कुछ और जाने बिना हम साफ़ दे सकते हैं कि ज्ञानवाद को संसार की ईश्वरीय सृष्टि (क्या ''भला परमेश्वर'' बुरे तत्व की रचना करेगा?) और यीशु के देहधारी होने (परमेश्वर दुष्ट शारीरिक देह में कैसे रह सकता है?) जैसे मसीही विश्वासों से दिक्कत थी। इस लहर के बढ़ने पर यह सीधे-सीधे कलीसिया के साथ टक्कर में आ गई।

इस पर संदेह है कि यूहन्ना वास्तव में, यूहन्ना 1 में ''ज्ञानवादी विरोधी'' शैली में लिख रहा था या नहीं, जैसा कि कइयों का मानना है, क्योंकि ज्ञानवादी लहर दूसरी सदी तक पूरी तरह से नहीं बही थी। परन्तु ज्ञानवादी विचारों के प्रति झुका बहुत पहले पैदा हो गए थे और यह असम्भव नहीं है कि यूहन्ना इनमें से पर प्रतिक्रिया दे रहा था। इसके अलावा यूहन्ना ने बार-बार ज्ञानवादी लोगों के पसन्दीदा शब्द जैसे ''प्रकाश'' और ''जीवन'' इस्तेमाल किए। तो क्या यूहन्ना ज्ञानवाद पर प्रतिक्रिया दे रहा था या ज्ञानवादियों ने यूहन्ना की शब्दावली से शब्द लिए होंगे?

एक पत्र का उदाहरण जो निश्चित रूप से ज्ञानवादी विचारों के विरोध में लगता है 1 यूहन्ना है।

सुसमाचार के चार विवरण क्यों?

मत्ती, मरकुस, लूका और यूहन्ना (''सुसमाचार के विवरण'') सभी यीशु की कहानी बताते हैं तो फिर यीशु की एक ही व्यापक कहानी के बजाय इन सभी को नये नियम में क्यों शामिल किया गया है? यह सवाल दूसरी सदी की ईस्वी से मसीह लोगों के दिमाग में है।

पहले तो हमें याद रखना चाहिए कि सुसमाचार के प्रत्येक लेखक में जो कुछ लिखा उसने बहुत चुनिन्दा शब्दों का इस्तेमाल किया, जिसमें वह जानकारी भी है जो उसकी विशेष बात को रखने और उस पर विशेष ज़ोर देने के लिए जिसे वह चाहता था आवश्यक है (यूहन्ना 20:30, 31)। उनमें से कोई भी हमें सब कुछ नहीं बताता, और यहां तक कि चारों मिलकर भी यीशु के विषय में हमारी जानकारी में कमी रहने देते हैं।

दूसरा, चारों का ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य से महत्व है। नये नियम के कैनन (परमेश्वर की प्रेरणा से दिए वचन के रूप में स्वीकार की जाने वाली पुस्तकों की सूची) विकसित करते हुए आरम्भिक कलीसिया ने उन सभी को शामिल किया जिनके पीछे वे प्रेरितों का अधिकार मानते थे। मत्ती और यूहन्ना प्रेरित थे और मरकुस और लूका प्रेरितों के बहुत नज़दीकी, इसलिए उनके कामों को अन्ततः बिना किसी संदेह के परमेश्वर के अधिकारात्मक वचन के रूप में स्वीकार किया गया है। मसीही लोगों ने उनके अधिकार को मानकर उन्हें पवित्र शास्त्र के रूप में स्वीकार किया।

तीसरा, हम देख सकते हैं कि यीशु के लिए हमारी समझ किस प्रकार बेकार हो सकती है यदि केवल हमारे पास एक ही सुसमाचार का वृत्तांत हो! चारों वृत्तांतों की तुलना कई बार यीशु

के चार चित्रों से की जाती है। उनमें से कोई भी हमें उसके बारे में सब कुछ नहीं बताता, पर हर वृत्तांत उसके स्वभाव और परिचय की कुछ विशेषताओं पर ज़ोर देता है। मत्ती यीशु के राजा होने पर ज़ोर देता है। मरकुस उसकी बड़ी सामर्थ और अधिकार पर अधिक ध्यान देता है। लूका यीशु को सारी मनुष्यजाति के लिए शुभ समाचार बनने के लिए आने वाले के रूप में दिखाता है। यूहन्ना यीशु को परमेश्वर के ईश्वरीय पुत्र अर्थात *लोगोस* के रूप में प्रस्तुत करता है जिसके द्वारा परमेश्वर न केवल अपनी इच्छा बल्कि अपने स्वभाव को भी बताता है।

जितना हम सुसमाचार के अलग-अलग वृत्तांतों को पढ़ते हैं उतना ही हम प्रत्येक लेखक के विलक्षण पहलू को सराने लगते हैं और हमें कितने अधिक धन्यवादी होना चाहिए कि हमारे पास सुसमाचार का एक नहीं बल्कि चार-चार वृत्तांत हैं।